www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
मंगलवार 5 फरवरी 2019

दैनिक जागरण

मानसिक शांति के अभाव में सारे सुख-वैभव व्यर्थ हैं

सीबीआइ पर घमासान

हजारों करोड़ रुपये के घोटाले की जांच में सीबीआइ की भूमिका को लेकर पश्चिम बंगाल सरकार और केंद्र सरकार के बीच कोलकाता से लेकर दिल्ली तक जैसी तनातनी देखने को मिल रही है वह जितनी अभूतपूर्व है उतनी ही दुर्भाग्यपूर्ण एवं लज्जाजनक भी। किस्म-किस्म के घपलों-घोटालों में सीबीआइ की जांच को लेकर विभिन्न राज्य सरकारों ने पहले भी अपनी आपत्ति जताई है, लेकिन यह पहली बार है जब कोई राज्य सरकार अपनी पुलिस का इस्तेमाल सीबीआइ अधिकारियों को बंधक बनाने में करे। मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने न केवल ऐसा किया, बल्कि पूरे मामले को राजनीतिक रंग देने के लिए धरने पर भी बैठ गईं। इससे भी खराब बात यह हुई कि इस धरने में कोलकाता के वह पुलिस आयुक्त भी शामिल हुए जिनसे सीबीआइ अधिकारी पूछताछ करना चाह रहे थे। समझना कठिन है कि उन्होंने पुलिस अधिकारी के बजाय तृणमूल कांग्रेस के कार्यकर्ता की तरह से व्यवहार करना क्यों उचित समझा? यदि ममता बनर्जी को संघीय ढांचे और संवैधानिक मर्यादा की तनिक भी परवाह होती तो वह वैसा बिल्कुल भी नहीं करतीं जैसा किया। आखिर संघीय ढांचे के प्रति तनिक भी संवेदनशील कोई मुख्यमंत्री वैसी राजनीतिक अपरिपक्वता का परिचय कैसे दे सकता है जैसा ममता बनर्जी दे रही हैं? इससे भी हैरानी भरा सवाल यह है कि सीबीआइ जांच को मनमाने तरीके से रोकने के पश्चिम बंगाल सरकार के फैसले का विभिन्न विपक्षी दल समर्थन क्यों कर रहे हैं? क्या इसलिए कि आम चुनाव नजदीक आ गए हैं और ऐसे समय खुद को मोदी सरकार के खिलाफ दिखाना राजनीतिक रूप से लाभकारी हो सकता है? जो भी हो, यह देखना दयनीय है कि कई विपक्षी राजनीतिक दल और विशेष रूप से वह कांग्रेस भी ममता बनर्जी की मनमानी का पक्ष लेने में लगी हुई है जो एक समय उन पर घोटालेबाजों को बचाने का आरोप लगा रही थी।

क्या कांग्रेस एवं अन्य विपक्षी दल चुनावी चिंता में यह बुनियादी बात भूल गए कि सीबीआइ उन लोगों के खिलाफ जांच कर रही है जो लाखों गरीबों के हजारों करोड़ रुपये हड़प कर गए हैं? क्या इससे बुरी बात और कोई हो सकती है कि विपक्षी दल घोटालेबाजों का बचाव करते दिखें? ममता सरकार के साथ विपक्षी दलों का रवैया चिटफंड घोटालों में लुटे लाखों लोगों के साथ घोर अन्याय ही है। यह संभव है कि रोज वैली और सारधा घोटाले की जांच के क्रम में सीबीआइ अपना काम सही तरह न कर रही हो, लेकिन उसकी किसी कथित खामी के विरोध का यह मतलब नहीं कि उसके अधिकारियों को गिरफ्तार करने का काम किया जाए। आखिर न्यायपालिका किसलिए है? इस मामले में इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि इन घोटालों की जांच अदालत के आदेश पर ही हो रही है। यदि ममता बनर्जी को सीबीआइ के तौर-तरीकों पर आपत्ति थी तो उन्हें अदालत जाना चाहिए था। चूंकि सीबीआइ अदालत पहुंच गई है इसलिए उसे न केवल यह देखना चाहिए कि वह अपना काम सही तरीके से करे, बल्कि उसके काम में अड़ंगा लगाने वालों को सबक भी सिखाना चाहिए। इसी के साथ सुप्रीम कोर्ट को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि सीबीआइ घोटालेबाजों को जल्द कठघरे में खड़ा करने में सक्षम हो।

कार्यसंस्कृति जरूरी

समाज में सभी के लिए जिम्मेदारियां तय होती हैं जिन्हें जिम्मेदारी से निभाना उनका कर्तव्य है। कर्मचारी हिमाचल प्रदेश सहित किसी भी सरकार की रीढ़ होते हैं, जिनके जिम्मे सरकारी योजनाओं को धरातल पर उतारने का जिम्मा होता है। साथ ही उनकी जिम्मेदारी होती है कि लोगों को पेश आने वाली दिक्कतों को दूर करने के लिए समय रहते कदम उठाएं। अगर कर्मचारी ईमानदार हों तो प्रशंसा का पात्र बनता है और गलत तरीके से कार्य करने वाले कर्मचारी सरकार के साथ अपनी साख भी खो देते हैं। कई बार देखा गया है कि अपने हित साधने के लिए कर्मचारी न केवल पद का दुरुपयोग करते हैं, बल्कि सरकार के लिए भी परेशानी का कारण बनते हैं। ईमान डोलने से कर्मचारी की गरिमा ही मिट्टी में नहीं मिलती, बल्कि लोगों के मन में पूरी व्यवस्था के खिलाफ गलत सोच पैदा होती है। अच्छा-बुरा समझने की शक्ति इंसान में होती है, लेकिन स्वार्थ और प्रलोभन में आकर राह से भटकने के मामले भी कम नहीं हैं। रिश्वत के आरोप में किसी बड़े अधिकारी का पकड़ा जाना या किसी कर्मचारी का ड्यूटी के दौरान नशे का सेवन कर पकड़ा जाना गंभीर मंथन का विषय है। आज के दौर में सरकारी नौकरी मिलना कितना मुश्किल है यह पीड़ा उन उच्च शिक्षित बेरोजगारों से पूछी जानी चाहिए जो नाममात्र वेतन पर निजी क्षेत्र में नौकरी कर रहे हैं। सरकारी नौकरी की चाहत इससे भी देखने को मिलती है कि एक-एक पद के लिए सैकड़ों आवेदन पहुंच जाते हैं। कुछ समय पहले मंडी और सोलन जिलों से ऐसे मामले भी सामने आए थे जब युवाओं न नौकरी न मिलने की कुंठा में जान तक दे दी। ऐसा क्यों है कि कुछ लोग नौकरी पाने के बाद ऐसा व्यवहार करते हैं, जो असहनीय है और समाज के हित में बिल्कुल नहीं होता। सरकार का दायित्व है कि कर्मचारियों की कार्यप्रणाली पर तीखी नजर रखे। कार्यसंस्कृति को ठेंगा दिखाने वाले कर्मचारियों के प्रति उदारता दिखाना सही नहीं है। ऐसे लोगों के खिलाफ सख्त कार्रवाई होनी चाहिए, जो काम से जी चुराते हैं।

विभाजनकारी मानसिकता का प्रदर्शन

बलबीर पुंज

जहां स्वयंभू सेक्युलरिस्ट रोहिंग्या मुसलमानों को भारत में शरण देने के लिए आंदोलनरत हैं तो पड़ोसी देशों में प्रताड़ित अल्पसंख्यकों को नागरिकता देने के विरोध में जुटे हैं

हाल में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के जम्मू-कश्मीर और पश्चिम बंगाल दौरे से 'नागरिकता संशोधन विधेयक' फिर से सार्वजनिक विमर्श में है। लोकसभा से पारित होने के बाद यह राज्यसभा में लंबित है जहां विरोधी दलों के साथ सरकार के कुछ सहयोगियों ने भी मोर्चा खोल दिया है। इसके विरोध में असम और पूर्वोत्तर के कुछ हिस्सों में कई संगठन प्रदर्शन भी कर रहे हैं। इस प्रस्तावित कानून का उद्देश्य बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफगानिस्तान से मजहबी अत्याचार के कारण 31 दिसंबर 2014 तक भारत में आए हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई शरणार्थियों को कुछ शर्तों के साथ नागरिकता प्रदान करना है। जम्मू के विजयपुर में तीन फरवरी को एक रैली में पीएम मोदी ने जो कहा है, वह काफी महत्वपूर्ण है। उनके अनुसार, 'मां भारती की कई संतानों ने पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश में अत्याचारों का सामना किया है। हम उन लोगों के साथ खड़े रहेंगे, जो एक समय भारत का हिस्सा थे, किंतु 1947 में विभाजन के कारण हमसे अलग हो गए थे। जब कांग्रेस सत्ता में थी तो उसने हमारे भाइयों और बहनों की पीड़ा पर ध्यान नहीं दिया। हम प्रतिबद्धता के साथ नागरिकता संशोधन विधेयक लाए हैं। यदि धर्म के आधार पर उनके साथ भेदभाव हुआ है तो देश उनके साथ खड़ा रहेगा।' पश्चिम बंगाल की ठाकुरनगर रैली में भी उन्होंने ऐसे ही विचार व्यक्त किए थे।

अपने भाषणों में जिस विभीषिका का उल्लेख पीएम मोदी ने किया है आखिर उसे संचालित करने वाला दर्शन कौनसा है? क्या यह सत्य नहीं कि उसी चिंतन ने भारतीय उपमहाद्वीप में पहले मुस्लिम अलगाववाद की नींव डाली, जिस पर बाद में हजारों-लाखों निरपराधों के शवों पर विभाजन किया गया और आज भी इसका प्रयास किया जा रहा है? 19वीं शताब्दी के अंत में मुस्लिम समाज का एक बड़ा वर्ग जिस विकृत 'द्विराष्ट्र सिद्धांत' से स्वयं को जोड़े हुए था-उसे आवश्यक खुराक 'काफिर-कुफ्र' की उसी अवधारणा से मिल रही थी, जिसमें इस्लाम के जन्म से पहले की सभ्यता, संस्कृति और गैर-मुस्लिमों के प्रति घृणा का भाव था।

जब 1947 में मजहब के नाम पर विभाजन के बाद वैश्विक मानचित्र पर इस्लामी राष्ट्र के रूप में पाकिस्तान उभरा तब भारतीय उपमहाद्वीप को मजहबी संकट से मुक्त हो जाना चाहिए था, परंतु क्या ऐसा हुआ? फिलहाल भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश में विश्व के 22 फीसद से अधिक लगभग 170 करोड़ लोग बसे हैं जिनमें हिंदुओं (सिख, जैन और बौद्ध सहित) की आबादी 105 करोड़ है तो मुस्लिमों की 55 करोड़। स्वतंत्रता के समय यहां हिंदुओं की आबादी 73.5 प्रतिशत थी, जो वर्ष 2018 में 60 प्रतिशत रह गई है। स्वतंत्रता के समय ऐसे अनुपात के अनुसार फिलहाल हिंदुओं की संख्या 125 करोड़ होनी चाहिए थी, लेकिन यह 105 करोड़ है। शेष 20 करोड़ हिंदू कहां गए? आज जो दल नागरिकता संशोधन विधेयक का विरोध कर रहे हैं, क्या वे इसका उत्तर दे पाएंगे?

विभाजन के समय शेष भारत में जहां हिंदू (सिख, जैन और बौद्ध सहित) 88 प्रतिशत थे, वहीं पाकिस्तान में यह संख्या 24 प्रतिशत और बांग्लादेश में 28 प्रतिशत थी। किंतु आज जहां पाकिस्तान में हिंदू-सिख 1.5 प्रतिशत रह गए हैं, वहीं बांग्लादेश में यह आंकड़ा आठ प्रतिशत है। इसका कारण मजहबी कट्टरता, मतांतरण, हत्या और सामाजिक शोषण है। 1970 के दशक में अफगानिस्तान में हिंदुओं और सिखों की संख्या लगभग ढाई लाख थी, जो 1990 में मजहब प्रेरित गृहयुद्ध के बाद निरंतर घटते हुए अब महज कुछ हजार ही रह गए हैं। त्रासदी देखिए कि जिस भूभाग में सिंधु-सरस्वती नदी के तट पर वैदिक साहित्य की रचना हुई थी, वहां उस मूल संस्कृति का नाम लेने वाले सम्मान के साथ जीवन जीने के मौलिक अधिकार से वंचित हैं।

अवधेश राजपूत

पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान से मजहबी अत्याचार झेलने के बाद जो गैर-मुस्लिम शरणार्थी भारत आए, आज उनकी संख्या लाखों में है। इस पृष्ठभूमि में नागरिकता संशोधन विधेयक का विरोध करने वाले, विशेषकर मोदी विरोधी राजनीतिक दलों का मुख्य आरोप है कि यह संविधान के खिलाफ है और भाजपा इसके माध्यम से क्षेत्र का जनसांख्यिकी अनुपात प्रभावित कर स्थानीय संस्कृति और परंपरा को नष्ट करना चाहती है।

यदि इस आक्षेप को आधार बनाया जाए तो वे सभी उन राज्यों के बारे में क्या कहेंगे जहां अवैध घुसपैठ और बलात मतांतरण के कारण जनसांख्यिकीय अनुपात में व्यापक अंतर आ चुका है। असम की वर्तमान 3.12 करोड़ आबादी में से 1.91 करोड़ (61.4 प्रतिशत) हिंदू तो मुस्लिम 1.07 करोड़ (34.2 प्रतिशत) हैं। 1971 से 1991 के बीच यहां मुस्लिम जनसंख्या में 77 प्रतिशत की वृद्धि हुई है और उसके बाद प्रत्येक दशक में उनकी आबादी में 29 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है, जबकि 1991 से यहां हिंदुओं की वृद्धि दर निरंतर घट रही है।

वर्ष 1951 में पश्चिम बंगाल की कुल जनसंख्या 2.63 करोड़ थी जिसमें मुसलमानों की आबादी पचास लाख से कम थी, जो 2011 की जनगणना में पांच गुना से अधिक बढ़ गई। आज पश्चिम बंगाल की कुल जनसंख्या 9.5 करोड़ में से 2.5 करोड़ से अधिक मुसलमान हैं-यानी कुल आबादी का 27 प्रतिशत। कई इलाकों में मुस्लिम आबादी 50 से 70 प्रतिशत तक पहुंच गई है। इसी तरह वर्ष 2001 में अरुणाचल प्रदेश में हिंदू 34.6 प्रतिशत थे जो 2011 में घटकर 29 प्रतिशत रह गए। 1971 में इस प्रदेश की कुल जनसंख्या 4.68 लाख में ईसाई एक प्रतिशत भी नहीं थे, किंतु 2011 में वह 30 प्रतिशत से अधिक हो गए। यहां बौद्ध अनुयायियों की संख्या भी 2001 में 13 प्रतिशत से घटकर 2011 में 11.7 प्रतिशत हो गई है। स्वतंत्रता से पूर्व नगालैंड कभी ईसाई बहुल नहीं रहा। 1941 में नगालैंड की कुल जनसंख्या में जहां ईसाइयों की आबादी लगभग शून्य थी, वह स्वतंत्रता के बाद वर्ष 1951 में एकाएक 46 प्रतिशत और 2011 में 88 प्रतिशत हो गई। जनगणना के अनुसार नगालैंड की कुल आबादी 19.8 लाख में 17.1 लाख अनुसूचित जनजाति से संबंधित हैं जिसमें 16.8 लाख लोग यानी 98.2 प्रतिशत ईसाई मतावलंबी हैं।

कालांतर में पाकिस्तान और बांग्लादेश से आए लाखों गैर-मुस्लिम शरणार्थी, नागरिकता संशोधन बिल के राज्यसभा से पारित होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। इनमें से अधिकांश मजहबी उत्पीड़न और इस्लामी कट्टरता के कारण पिछले कई दशकों से भारत में शरण लिए हुए हैं। ऐसे में विधेयक का सियासी विरोध अफसोसजनक है, क्योंकि ऐतिहासिक रूप से सभी हिंदू, सिख, जैन, बौद्धों आदि का प्राकृतिक घर वही भारत है जिसका विभाजन कर दिया गया था। आज जो स्वघोषित सेक्युलरिस्ट या स्वयंभू उदारवादी, विधेयक का विरोध कर रहे हैं और विदेशी मूल के रोहिंग्या मुस्लिमों को भारत में शरण देने के लिए आंदोलन करते हैं, उससे स्पष्ट होता है कि विभाजन के 72 वर्ष बाद भी भारत, पाकिस्तान को जन्म देने वाली जहरीली मानसिकता से मुक्त नहीं हो पाया है। कश्मीर सहित देश के कुछ अन्य हिस्से, इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

(लेखक राज्यसभा के पूर्व सदस्य एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

बौद्धिक विमर्श की भटकती राह

देश भर के 1,125 केंद्रीय विद्यालयों में सभी धर्म के छात्रों के लिए संस्कृत श्लोक 'असतो मा सद्गमय' वाली प्रार्थना की अनिवार्यता मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है या नहीं, इसे लेकर जबलपुर के एक वकील ने गत वर्ष सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी थी। याचिका में कहा गया है कि केंद्रीय विद्यालयों में प्रार्थना का हिस्सा यह श्लोक एक धर्म विशेष से जुड़ा धार्मिक संदेश है। संविधान के अनुच्छेद 28(1) के अनुसार सरकार द्वारा संचालित किसी भी विद्यालय या संस्थान में किसी भी विशिष्ट धर्म की शिक्षा नहीं दी जा सकती, इसलिए इस पर रोक लगाई जानी चाहिए। याचिका में यह भी कहा गया है कि प्रार्थना के बजाय बच्चों में वैज्ञानिक सोच विकसित की जानी चाहिए जिससे छात्रों में बाधाओं और चुनौतियों के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण की प्रवृत्ति विकसित होती है। बहस के दौरान यह बात भी उठी कि विवादित संस्कृत श्लोक हिंदू धर्म से जुड़े बृहदारण्यक उपनिषद से लिया गया है और इसलिए यह धर्म विशेष से जुड़ा हुआ है। सुप्रीम कोर्ट के दो जजों की पीठ ने मामले को अब संविधान पीठ को सौंप दिया है।

प्रसिद्ध अमेरिकी राजनीति विज्ञानी सैमुअल हटिंगटन ने लगभग ढाई दशक पहले 'क्लैश ऑफ सिविलाइजेशंस' में कहा था कि शीत युद्ध के बाद लोगों की सांस्कृतिक एवं धार्मिक पहचान ही संसार में संघर्षों का मुख्य कारण होगी। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हटिंगटन के सिद्धांत की अपनी सीमाएं हैं, लेकिन भारत के संदर्भ में सांस्कृतिक संघर्षों की बात एक हद तक सही है। हालांकि इसकी शुरुआत हटिंगटन की घोषणा के बहुत पहले से हो गई थी। खासतौर से भारत की स्वाधीनता के बाद इसे भलीभांति रेखांकित किया जा सकता है, जिसका साकार रूप हमारे बौद्धिक और शैक्षणिक विमर्शों में स्पष्ट देखा जा सकता है। जिसमें एक तरफ वामपंथी और पश्चिम से प्रभावित तथाकथित उदारवादी बुद्धिजीवी थे तो दूसरी ओर वे लोग जो इस देश की मिट्टी और संस्कृति के माध्यम से अपनी पहचान बनाना चाहते थे। इस दूसरे पक्ष में गांधी जी की परंपरा से जुड़े लोगों के अतिरिक्त विभिन्न अन्य धाराओं के बुद्धिजीवी शामिल थे। दरअसल केंद्रीय विद्यालयों में प्रार्थना पर उठा यह विवाद इसी सांस्कृतिक-बौद्धिक संघर्ष से जुड़ा नया वाकया है। इस विवाद-मुकदमे में संविधानप्रदत्त मूल अधिकार के उल्लंघन का सवाल उठा है। वैसे देखा जाए तो प्रार्थना एवं अध्यात्म और वैज्ञानिक सोच के बीच संबंध के साथ-साथ इस देश के बौद्धिक विमर्श की दिशा सहित कुछ अन्य मुद्दे भी इससे जुड़े हैं।

यह सही है कि अनुच्छेद 28(1) के अनुसार सरकार द्वारा संचालित कोई भी संस्थान किसी भी विशिष्ट धर्म की शिक्षा नहीं दे सकता, लेकिन 'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मामृतं गमय', जिसका अर्थ है, 'मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलो, मुझे अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो, मुझे मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो' केवल इसलिए धार्मिक नहीं हो जाता कि यह हिंदुओं के उपनिषद से उद्धृत है। सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने कोर्ट में ठीक ही कहा कि 'असतो मा सद्गमय' धर्मनिरपेक्ष है। यह सार्वभौमिक सत्य के वचन हैं जो सभी धर्मावलंबियों पर लागू होते हैं। मेहता ने यह दलील भी दी कि सुप्रीम कोर्ट के प्रतीक चिन्ह पर भी संस्कृत में 'यतो धर्मस्ततो जयः' लिखा है जो श्रीमदभगद्गीता से उद्धृत है। इसका मतलब यह तो नहीं हुआ कि सुप्रीम कोर्ट धार्मिक है।

मेहता का तर्क सही है, नहीं तो भारत का राष्ट्रीय आदर्श

प्रो. निरंजन कुमार

'असतो मा सद्गमय' धर्मनिरपेक्ष प्रार्थना है। यह सार्वभौमिक सत्यवचन असल में सभी धर्मावलंबियों पर लागू होता है

वाक्य सत्यमेव जयते भी एक धार्मिक वाक्य हो जाएगा, क्योंकि यह मुंडकोपनिषद से लिया गया है। और तो और हमारा राष्ट्रीय प्रतीक-चिन्ह अशोक स्तंभ भी धार्मिक हो जाएगा, क्योंकि सत्यमेव जयते अशोक स्तंभ के नीचे अंकित है। ज्ञातव्य है कि सम्राट अशोक द्वारा बनवाए इस सिंह स्तंभ में यह आदर्श वाक्य मूल रूप से नहीं है। इस वाक्य को राष्ट्रीय प्रतीक-चिन्ह में अलग से जोड़ा गया। इसे पंडित नेहरू, डॉ. आंबेडकर और अन्य नेताओं ने 26 जनवरी, 1950 को स्वीकारा था। फिर जिस श्लोक की प्रार्थना पर विवाद हो रहा है वह कोई धार्मिक शिक्षा नहीं है और उसे कांग्रेस सरकार के समय शुरू किया गया था।

कोई प्रबुद्ध समाज अपनी गौरवशाली विरासत को नकार कर आगे नहीं बढ़ सकता। प्रसिद्ध अश्वेत चिंतक मारकस गार्वी लिखते हैं कि अपने अतीत, मूल और संस्कृति के ज्ञान के बिना व्यक्ति एक जड़हीन पेड़ की तरह है। चूंकि भारतीय सांस्कृतिक विरासत की बड़ी थाती संस्कृत परंपरा से आती है तो इसे कैसे छोड़ दिया जाए? फिर इस विरासत के प्रगतिशील, मानवतावादी और धर्मनिरपेक्ष तत्वों को ही अपनाने की बात की जा रही है, विशुद्ध धार्मिक प्रतीकों को नहीं। याचिका के तर्क को अगर मान लिया जाए तो स्कूल-कॉलेजों में पढ़ाए जा रहे हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं के पाठ्यक्रम से महान भक्ति साहित्य को ही बाहर कर देना पड़ेगा, जिसे देसी-विदेशी विद्वानों, यहां तक कि मार्क्सवादी साहित्यकारों और चिंतकों ने भी मुक्त कंठ से सराहा है।

प्रार्थना के विरुद्ध याचिका में दिया एक अन्य तर्क कि यह वैज्ञानिक सोच में बाधक है, भी सही नहीं है। सभी धर्मों में प्रार्थना पर जोर दिया जाता है, लेकिन इसका अर्थ वहां कर्म और वैज्ञानिक सोच से विमुख होना नहीं है। यहां प्रार्थना किसी विशेष वस्तु के लिए न होकर अपनी आत्मा और अंतःशक्ति को जागृत करने के लिए, स्वयं के परिष्कार के लिए है। और यह पूरे स्कूली कार्यक्रम और समय का अत्यंत छोटा हिस्सा है। फिर आज की जटिल होती जा रही जिंदगी में जब बच्चे, किशोर और युवा आत्मिक रूप से कमजोर होकर कई तरह की विकृतियों का शिकार हो रहे हैं उस स्थिति में 'असतो मा सद्गमय' जैसी पंक्तियां उनमें आत्मविश्वास और नैतिक शक्ति का संचार कर सकती हैं।

दरअसल आजादी के बाद से हमारा सांस्कृतिक, बौद्धिक और शैक्षणिक विमर्श जाने-अनजाने वामपंथी और पश्चिमी प्रभाव से आतंकित अंग्रेजीपरस्त लोगों के चंगुल में चला गया था, जहां भारतीय तत्वों के प्रति उपेक्षा या हीनता का और पश्चिमी चीजों के प्रति श्रद्धामिश्रित भय का भाव होता है। इसी भाव के कारण हम आज भी चाणक्य को भारत का मैकियावेली कहते हैं तो कालिदास को भारत का शेक्सपियर और समुद्रगुप्त को भारत का नेपोलियन, जबकि कालक्रम, प्रतिभा और उपलब्धियों-तीनों ही दृष्टियों से चाणक्य, कालिदास और समुद्रगुप्त ऊपर हैं। इसी मानसिकता के कारण भारतीय परिवेश में कानून की गुत्थियों को समझने के लिए किसी भारतीय कृति की जगह हैरी पॉटर को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाता है। समय आ गया है कि इस सांस्कृतिक-बौद्धिक संघर्ष में हम अपने सांस्कृतिक अतीत की गौरवशाली जड़ों से जुड़ें। इसी में हमारा भविष्य है।

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

राष्ट्र प्रेम

प्रत्येक व्यक्ति को अपने राष्ट्र से प्रेम करना चाहिए। जिस मिट्टी में हमने जन्म लिया, उसके हम सदैव ऋणी रहते हैं, इसलिए अपने राष्ट्र से प्रेम करके हम उसके प्रति आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त कर सकते हैं। किसी भी व्यक्ति की पहचान उसके राष्ट्र से ही होती है, जबकि राष्ट्र किसी व्यक्ति की पहचान का मोहताज नहीं होता। हर व्यक्ति राष्ट्र के लिए होता है, राष्ट्र किसी व्यक्ति के लिए नहीं। हालांकि नागरिकों के चरित्र से किसी देश का चरित्र जरूर रेखांकित होता है। यदि नागरिक राष्ट्र हित में पूर्ण निष्ठा रखें और सभी नियम-कानूनों का पालन करें तो उस राष्ट्र की चारों ओर तारीफ होती है। राष्ट्र हित को न मानने से नागरिकों के साथ देश के चरित्र का भी पतन होता है।

जिस देश में लोगों के बीच आपस में नफरत और घृणा व्याप्त होगी, विश्व में उस देश की छवि नकारात्मक होगी। इसके विपरीत जहां लोग आपसी मतभेदों को भुलाकर समानता और त्याग का परिचय देंगे, उनके देश की छवि सकारात्मक होगी। राष्ट्र प्रेम एक ऐसी शक्ति है, जिसमें लोग अपने व्यक्तिगत हितों को त्यागकर सर्वप्रथम राष्ट्र के उत्थान एवं प्रगति के लिए प्रेरित होते हैं। जहां लोगों के बीच जितना ज्यादा आपसी प्रेम होगा, वहां राष्ट्र प्रेम की भावना उतनी प्रबल होगी। जिस प्रकार प्रेम के अभाव में मनुष्य के अस्तित्व की कामना नहीं की जा सकती, उसी तरह आपसी प्रेम के बिना राष्ट्र प्रेम कदापि संभव नहीं है। नफरत मनुष्य और देश दोनों को भीतर ही भीतर खोखला कर देती है। ऐसे में देश की जनता को आपस में प्रेम रखते हुए एक साथ एक दिशा में अग्रसर होना चाहिए। हालांकि अलग-अलग धर्म और समुदायों के कारण देश की जनता के बीच आपस में मतभेद स्वाभाविक हैं, पर उनके बीच मनभेद कभी नहीं होना चाहिए।

जब देश के नागरिकों के मन में सभी के लिए एक जैसा भाव, वचन से किसी को आघात न पहुंचे और कर्म देशहित में हो तो उस राष्ट्र में हमेशा शांति का माहौल बना रहेगा और वह तरक्की के नए सोपान तय करता है। वैसे भारत में बीते कुछ सालों से सामाजिक परिदृश्य पूरी तरह बदल गया है, जिसकी वजह से समाज में नफरत और वैमनस्य बढ़ रहा है। यदि देश में अशांति रहेगी तो हम कैसे खुश रह सकते हैं।

शंभूनाथ पांडेय

महापुरुष कर्म से बनते हैं षडयंत्र से नहीं

ाहले के जमाने में एक बार आप महापुरुष घोषित ो लिए तो फिर सर्वमान्य एवं सर्वकालिक ाहापुरुष होते थे। मरणोपरांत महापुरुष के नाम ार सड़क का नाम रखा जाता था और उनकी मूर्ति ाौराहे पर लगा दी जाती थी। हालांकि महापुरुषों ी चौराहे पर लगी मूर्ति पर तब कबूतर आकर ाैठते और बीट किया करते थे, मगर परिंदे नादान ाेते हैं। अतः उन्हें माफ कर देने की प्रथा रही है। बूतरों की बीट से सने महापुरुषों की मूर्तियों ो आमजन उतने ही श्रद्धा से नमन करते थे, जतना कि वह उन महापुरुषों के जन्म दिवस और ुण्य तिथि पर नहला-धुला कर साफ-सुथरी की ाई मूर्ति के माल्यार्पण के दौरान करते। वह दौर ाेल्फी का नहीं था, मगर ऐसे विशिष्ट महापुरुषों े कर्म और उनकी मूर्तियों की छवि हर दिल और दमाग में अंकित रहती।

लोग उनकी प्रतिमा को देख और उनके ादकर्मों के बारे में पढ़कर उनसे प्रेरणा प्राप्त रते और दिल में एक चाह रहती कि मैं भी नके पदचिन्हों पर चल कर एक दिन महापुरुष ानूं। परीक्षा में जब महापुरुष पर निबंध लिखने ो आता तो तय रहता था कि 90 प्रतिशत ाच्चे तो महात्मा गांधी पर लिखेंगे ही। बाकी वामी विवेकानंद, नेताजी सुभाषचंद्र बोस,

फिर स

कुछ लोग अपने देश के लिए बिना किसी लाभ की इच्छा किए कर गुजरते हैं कि ज उन्हें महापुरुष मान

चंद्रशेखर आजाद, भगत ... नाथ टैगोर, डॉ. आंबेडकर, पं. न ... टेल, वीर सावरकर आदि अनेक ... ते थे। उनको महापुरुष मानना है या ..., ऐसा कोई विवाद न था। सबका ... सभी अपना धर्म समझते थे। एक ... देखते जाने क्या हुआ कि नए महाप ... बंद हो गए। पिछले कितने दशकों म ... ापुरुष आया ही नहीं, एक दो अपवा ... लाम साहब, अटल जी वैसे ही अ ... एंगे।

दरअसल महापुरुष न त ... न ही किसी फैक्टरी में बनाए ज ... अपने समाज के प्रति संपूर्ण समर्पण ... किसी व्यक्तिगत लाभ के त्याग भ ... कुछ

ऐसा कर गुजरते हैं कि उन्हें जन-जन महापुरुष मान लेता है।

तिवारी जी से घंसू जानना चाह रहा है कि आजकल महापुरुष बन क्यूं नहीं रहे हैं? तिवारी जी का मानना है कि दरअसल नए जमाने के महापुरुष बनने के अभिलाषी जान गए हैं अपनी सीमाएं। अब उन्हें पता है कि वे एक खिंची हुई लाइन से बड़ी लाइन खींचने की क्षमता नहीं रखते हैं। अतः उनके पास बड़ा होने के लिए मात्र एक विकल्प है। पहले से खिंची हुई लाइन को मिटाकर छोटा करना ताकि वे उससे बड़ा नजर आने लगें और लोग भ्रमित होकर उन्हें महापुरुष मान लें। भ्रम का मकड़जाल फैलाने की महारत तो हासिल है ही। इसी कवायद में पुराने महापुरुषों को गलत ठहराने का अभियान चलाने की परंपरा भी चल निकली है ताकि उनको महापुरुषों की सूची से अलग किया जा सके।

कोई इनको कैसे समझाए कि महापुरुष कर्मों से बनते हैं, षडयंत्रों से नहीं। सेल्फी और तोड़-मरोड़कर बनाए गए वीडियो से अगर महापुरुष बनते होते तो अब तक लाखों फेसबुकिया महापुरुष का दर्जा पा गए होते।

(साभार : उड़न तश्तरी ब्लॉग में समीर लाल 'समीर')

मूल समस्या की अनदेखी

दुनिया के लिए समस्या बनता बेलगाम चीन शीर्षक से लिखे अपने लेख में आरपी सिंह ने चीन की बढ़ती सैन्य शक्ति को दुनिया के साथ-साथ भारत के लिए भी चिंता का विषय बताया है, लेकिन यह भी हो सकता है कि चीन अपने सुरक्षातंत्र मजबूत करने की कोशिश कर रहा हो और दुनिया इसे गलत नजरिये से देख रही हो। मैं लेखक से पूछना चाहता हूं कि अपने देश के सुरक्षातंत्र को मजबूत करने में आखिर बुराई क्या है? क्या किसी देश को अपनी रक्षा तैयारियों को मजबूत करने का अधिकार नहीं है? अन्य देश भी ऐसा करें, चीन ने ऐसा करने से उन्हें रोका तो नहीं है। अगर हम रक्षा और उद्योग क्षेत्र में पिछड़े हैं तो इसकी वजह भी हम ही हैं। समझ में नहीं आता कि भारत जैसे देश अपनी कमजोरियों को दूर कर सशक्त देश के रूप में उभरने के बजाय इसका ठीकरा चीन जैसे मजबूत देशों पर क्यों फोड़ते हैं? क्या यह सच नहीं है कि चीन को आर्थिक तौर पर मजबूत करने में भारत भी बड़ी भूमिका निभा रहा है। भारत अपने उद्योगों को आगे बढ़ाने के बजाय चीनी उत्पादों का बड़ा आयातक बना हुआ है। बेहतर होता कि लेखक यह बताते कि भारत को विकसित राष्ट्र बनने के लिए क्या करना चाहिए? वहीं अगर बेलगाम चीन दुनिया के लिए समस्या बनता नजर आ रहा है तो लेखक को यह भी बताना चाहिए था कि उस पर कैसे लगाम लगाई जानी चाहिए? चीन को रोकने का एक उपाय यह हो सकता है कि दुनिया के सभी देश एकजुट होकर दुनिया में उसके बढ़ते दबदबे को रोकने का प्रयास करें तो वह कभी भी अपनी सैन्य शक्ति के मद में बेलगाम नहीं हो पाएगा। उम्मीद करता हूं कि लेखक अपने अगले लेख में कुछ बेहतर उपायों का जिक्र करेंगे।

raju09023693142@yahoo.com

मेलबाक्स

जिम्मेदारी निभाए नेतृत्व

आधुनिक दौर में भारतीय ग्रामीण समाज काफी हद तक भटक गया है। पहले जहां एक घर की महिलाएं दूसरे घर की महिलाओं से बीच में दीवार होते हुए भी बात कर लेती थीं। आज वही महिलाएं धारावाहिकों की दुनिया में खो गई हैं। यह बदलाव सिर्फ महिलाओं में ही नहीं, अपितु ग्रामीण परिवेश में रहने वाले बच्चों का भी हुआ है। जो बच्चे पहले गांव की मिट्टी में कबड्डी खेलते थे, अब वही बच्चे घर में बैठकर मोटू-पतलू, छोटा भीम या कोई अन्य कार्टून देखना पसंद करते हैं, जिसमें उनका शारीरिक विकास पहले के मुकाबले कम हो रहा है। पहले जो बच्चे रात होते ही दादी या नानी के आसपास पास जमा हो जाते थे कहानी सुनने के लिए, अब वही बच्चे यू ट्यूब पर समय बिताते हैं। देखा जाए हमारे समाज में हाल के दिनों में आईं कुछ समस्याएं इन्हीं की देन हैं। दुख की बात है कि हमारे देश का राजनीतिक और बौद्धिक जगत के प्रभावकारी लोग इस भटकाव को रोकने की गंभीर कोशिश नहीं कर रहे हैं।

निखिल कुमार झा, शास्त्री पार्क, दिल्ली

रूढ़िवादी मानसिकता त्यागे समाज

समाज में आई आधुनिकता से महिलाओं की स्थिति बदल रही है, लेकिन समस्या यह है कि आधुनिकता और तरक्की के बावजूद भारतीय समाज में महिलाओं के पास सुखी जीवन व्यतीत करने लायक पर्याप्त धन, प्रत्येक स्तर पर सामाजिक सुरक्षा और सम्मान करने वाले माहौल का अभाव है। आज भी पढ़ी-लिखी और रोजगार करने वाली स्त्री को समाज पुरुष के बराबर नहीं समझता। उन्हें समाज में दूसरे पायदान पर ही रखा जाता है। भारत में पढ़ी-लिखी बुद्धिमान आत्मनिर्भर और स्वतंत्र सोच वाली अकेली युवा महिलाओं को लेकर अहम चिंता यह है कि एक उपयुक्त जीवन साथी मिलने में कहीं ना कहीं उनकी सफलता ही अहम बाधा बन जाती है। इसके पीछे रूढ़िवादी मानसिकता है कि एक स्त्री का ओहदा हमेशा उसके पति से कम होना चाहिए। आज इसी मानसिकता के कारण बहुत सी स्त्रियां एकल जीवन जीना पसंद करती हैं। यही सोच उन्हें ऐसा करने के लिए प्रेरित करती है।

एकता, डॉ. भीमराव आंबेडकर कॉलेज

ऐसे कैसे रुकेगा भ्रष्टाचार

सुप्रीम कोर्ट ने जब सीबीआइ को सारधा चिटफंड घोटाले की जांच का आदेश दिया है तो इसमें ममता बनर्जी का अड़ंगा डालना गलत है। केंद्रीय जांच एजेंसी की टीम को काम करने से रोकने के साथ ही आरोपित अधिकारी के समर्थन में धरने पर बैठना एक मुख्यमंत्री को शोभा नहीं देता। इस तरह भ्रष्टाचार को कैसे रोका जा सकेगा? कायदे से उन्हें धरने की राजनीति बंद करके आरोपों का सामना करना चाहिए।

नीरज कुमार पाठक, नोएडा

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्क
E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ह